315hi11

11

भारत में प्रादेशिक राज्यों का उदय

वर्तमान में भारत में अट्ठाइस प्रदेश हैं। इनमें से प्रत्येक प्रदेश की अपनी विशिष्ट भाषा, भूगोल, खान–पान और संस्क ति है, जो भारत की संस्क ति को सम द्ध और विविधतापूर्ण बनाते हैं। आपको आश्चर्य होगा कि इन विभिन्न प्रदेशों में यह प्रादेशिक संस्क ति कैसे विकसित हुई? क्या यह अनंत काल से इसी रूप में थी? जब हम इतिहास के पन्ने पलटते हैं तो हमें अनुभव होता है कि विभिन्न रूपों में ये प्रदेश मौजूद थे और इनमें विभिन्न कालावधियों में लगातार परिवर्तन की यह प्रक्रिया चलती रही।

इस पाठ में आप विभिन्न प्रादेशिक राज्यों के संबंध में बारहवीं से अठारहवीं सदी के बीच की ऐतिहासिक प ष्ठभूमि का अध्ययन करेंगे। इस अवधि के कुछ प्रादेशिक राज्य आजकल एक राज्य का हिस्सा हैं। उदाहरण के तौर पर, जयपुर, जोधपुर और उदयपुर, मध्यकाल में स्वतंत्र प्रादेशिक राज्य थे जो आज राजस्थान राज्य के जिले हैं। कुछ प्रादेशिक राज्य अब एक से अधिक राज्य के हिस्से हैं। उदाहरण के लिए विजयनगर साम्राज्य (1336–1565 ईस्वी) आजकल के आधुनिक राज्यों कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु का हिस्सा है। कुछ प्रादेशिक राज्य ऐसे हैं, जिनके वही प्राचीन नाम थे, जो आधुनिक काल के राज्य के हैं, परन्तु उनमें शामिल क्षेत्र उनसे भिन्न हैं। उदाहरण के लिए, गुजरात, बंगाल, कश्मीर और उड़ीसा के आधुनिक राज्यों का अस्तित्व बारहवीं से अठारहवीं सदी में इन्हीं नामों से था, परन्तु आज उनकी भौगोलिक स्थिति उससे अलग है, जो 12वीं से 18वीं सदी के मध्य में थी।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आप :

- बारहवीं से अठारहवीं सदी की अवधि के दौरान विभिन्न प्रादेशिक राज्यों के संबंध में संक्षिप्त विवरण दे सकेंगे;
- 'प्रादेशिक राज्य' शब्द का अर्थ समझा सकेंगे;
- प्रादेशिक राज्यों और दिल्ली सल्तनत तथा मुगल साम्राज्य के परस्पर संबंधों की प्रक ति समझा सकेंगे;
- विभिन्न प्रादेशिक राज्यों में परस्पर संबंध समझा सकेंगे;

- इन प्रादेशिक राज्यों की राजनीतिक विचारधाराओं और संगठनों को परिभाषित कर सकेंगे;
- प्रादेशिक राज्यों की आर्थिक और सांस्क तिक परिस्थितियों का वर्णन कर सकेंगे, और
- इन प्रादेशिक राज्यों के संबंध में सूचना देने वाले उस काल के मूल स्रोतों और दस्तावेज़ों की सूची बना सकेंगे।

11.1 'प्रादेशिक राज्य' और 'प्रादेशिकता' शब्दों को समझना

एक छोटे से पाठ में उन सभी प्रादेशिक राज्यों के संबंध में विवरण देना अत्यंत कठिन काम है। उनमें से सिर्फ कुछ को ही अध्ययन के लिए यहाँ चुना गया है। ये इस प्रकार हैं –

1. उत्तर भारत से हम दो प्रादेशिक राज्यों के इतिहास के संबंध में पढ़ेंगे, एक है 'जौनपुर', जो आज उत्तर प्रदेश में है और दूसरा है 'कश्मीर'।
2. दक्षिण भारत से हम विजय नगर और बहमनी साम्राज्य के इतिहास के बारे में पढ़ेंगे। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है कि विजय नगर साम्राज्य को वर्तमान कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु प्रदेशों में और बहमनी साम्राज्य को कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और महाराष्ट्र में देखा जा सकता है।
3. पश्चिम भारत से हम गुजरात और मराठों का अध्ययन करेंगे। गुजरात को आज भी इसी नाम से जाना जाता है और मराठों का आजकल के महाराष्ट्र, तमिलनाडु और भारत के कुछ अन्य भागों पर नियंत्रण था।
4. और अंत में पूर्वी भारत में हम बंगाल के इतिहास का अध्ययन करेंगे।

भारत के इतिहास में प्रादेशिकता और प्रादेशिक राज्यों का लगातार उद्‌भव और विकास होता रहा है। प्रादेशिक राज्यों के उदय की व्याख्या कैसे की जाएगी? सातवीं सदी ईस्वी से लेकर, जिसे प्रारंभिक मध्यकाल माना जाता है, 17वीं और 18वीं सदी तक क षि और क षि संबंधी गतिविधियों ने प्रादेशिक राज्यों के विकास में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जहां भी अच्छी क षि संबंधी गतिविधियां मौजूद रही हैं, इसने न सिर्फ लोगों की भूख को शांत किया है, बल्कि इससे अधिक पैदावार भी हुई, जिसे बेचकर धन कमाया जा सका था। भू–मार्ग और जलमार्ग से होने वाले व्यापार और व्यापारिक गति–विधियों ने भी राजस्व कमाने के बहुत महत्त्वपूर्ण स्रोत प्रदान किए। उस समय के दौरान समाज में हम ऐसे शक्तिशाली वर्गों के उद्‌भव को रेखांकित कर सकते हैं, जो बढ़ती क षि उत्पादों की बढ़ोतरी को नियंत्रित करते थे। कई बार इस शक्तिशाली वर्ग के कुछ सदस्यों ने अपना अधिकार भी जताया और राजनीतिक शक्ति प्राप्त कर राजा बन गए और साम्राज्यों की स्थापना की। इसी ने ही राज्यों की स्थापना की नींव रखी। कई बार बाहर से भी कुछ समूहों ने प्रवेश किया और यहां पर कई इलाकों को जीता और वहां का प्रशासनिक नियंत्रण अपने हाथ में लेकर बहुत शक्तिशाली स्थान ग्रहण किया।

यह सच है कि बड़ी संख्या में तेरहवीं सदी के पश्चात् प्रादेशिक राज्यों का उदय दिल्ली सल्तनत की अंदरूनी कमजोरी की वजह से हुआ। इसी प्रकार मुगल शासन के पतन के पश्चात्, अठारहवीं सदी में महत्त्वपूर्ण प्रदेशों का उदय हुआ। परन्तु इन सभी प्रदेशों का

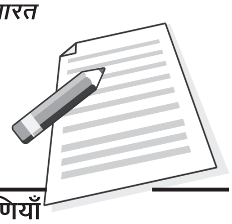

अपना निजी इतिहास था, जो दिल्ली सल्तनत और मुगल साम्राज्य, दोनों से पहले भी मौजूद था। उदाहरण के लिए बंगाल, आठवीं और नवीं सदी में पालों के अधीन और उसके बाद बारहवीं सदी में सेनों के अधीन एक महत्त्वपूर्ण प्रादेशिक साम्राज्य था। यह तेरहवीं और पन्द्रहवीं सदी के दौरान स्वतंत्र प्रदेश था और अठारहवीं सदी में भी यह बहुत शक्तिशाली प्रादेशिक साम्राज्य रहा। जैसा कि हम सभी जानते हैं, दिल्ली सल्तनत और मुगल साम्राज्य ने अनेक विभिन्न सांस्क तिक क्षेत्रों पर शासन किया। इसीलिए यह याद रखना चाहिए कि प्रादेशिक राजवंश शक्ति ग्रहण करते रहे या कभी हारते रहे या उन्होंने अपनी भौगोलिक सीमाओं को भी बदला, परन्तु प्रादेशिकता का अस्तित्व हमेशा मौजूद रहा।

प्रादेशिकता क्या है? राजनीतिक विशेषताओं, जैसे प्रादेशिक शासकीय राजवंशों के अतिरिक्त प्रादेशिकता की कुछ अन्य विशेषताएं भी हैं, जो इन प्रादेशिक राज्यों में विकसित और पल्लवित हुईं और समय के साथ बदलती गईं। प्रादेशिकता की कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

1. एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है 'भाषा'। उदाहरण के तौर पर उड़िया, गुजराती, बँगला, तमिल, तेलुगू, कन्नड और मराठी आदि कई भाषाएं भारत के विभिन्न क्षेत्रों में बोली जाती हैं, जिन्हें प्रादेशिक भाषाएं कहते हैं। ये भाषाएं प्रारंभिक मध्य और मध्य युग में विकसित हुईं और विशिष्ट क्षेत्रों से सबंधित रहीं। यद्यपि ये भाषाएं किसी–न–किसी रूप में इससे पहले भी अस्तित्व में थीं, परन्तु ग्यारहवीं और बारहवीं सदियों में ही मूलतः इन प्रादेशिक भाषाओं को सरकारी दस्तावेजों में प्रयोग में लाया गया। साहित्यिक रचनाएं और स्थानीय साहित्य की रचनाएँ इन भाषाओं में लिखी जाने लगीं। मध्य युग में प्रादेशिक भाषाओं के प्रयोग के साथ–साथ, दार्शनिक ग्रन्थों में संस्क त का प्रयोग भी होता रहा। तथापि दिल्ली सल्तनत और मुगल साम्राज्य के अधिकांश सरकारी दस्तावेज़ और कुछ प्रादेशिक राज्यों के दस्तावेज फारसी में लिखे जाते थे।

2. एक अन्य विशिष्टता है, स्थानीय प्रादेशिक उपासना पद्धति और धार्मिक जुड़ाव। उदाहरण के लिए उड़ीसा में जगन्नाथ की उपासना केवल उड़ीसा प्रदेश में ही सीमित थी। यह राज्य का पंथ या संप्रदाय बन गया और शासकों ने भी इसे अपना लिया, उनके लिए एक भव्य मंदिर बनवाया और हर वर्ष इसके साथ जुड़े उत्सव मनाए जाने लगे। इतिहासकारों का कहना है कि जगन्नाथ एक जनजातीय देवता थे, जिनकी लोकप्रियता ने शासकों को इसे राज्य के पंथ या संप्रदाय के रूप में अपनाने के लिए प्रेरित किया। अगले भाग में हम राज्य और धर्म के परस्पर संबंधों पर प्रकाश डालेंगे। प्रादेशिक क्षेत्रों में बहुत बड़ी संख्या में धार्मिक सम्प्रदाय और 'भक्ति' धर्म विकसित हो गए। उदाहरण के लिए नामदेव, रैदास, तुकाराम, गुरूनानक प्रादेशिक राज्यों में मौजूद थे। धर्मों की भी अपनी पौराणिक कथाएं, दंतकथाएं और परिभाषाएं तथा धार्मिक कर्मकांड होते हैं। क्या आप जानते हैं कि उत्तर भारत में शिव–पार्वती के पुत्र कार्तिकेय, अविवाहित माने जाते हैं और तमिल क्षेत्र में उनकी दो पत्नियां हैं देवयानी और वल्ली। प्रत्येक क्षेत्र के अपने स्थानीय देवी–देवता और विभिन्न मंदिर और मस्जिदों का वास्तुशिल्प था। दिलचस्प बात यह है कि इन प्रादेशिक भिन्नताओं के बावजूद जहाँ हर क्षेत्र की अपनी विशिष्ट परम्पराएं थीं, वहीं प्रादेशिक परम्पराओं में समानताएं भी थीं। संत और पुजारी एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में

स्थानांतरित हुए। उदाहरण के लिए सूफी संत, गेसू दराज़ (1321–1422), जो दिल्ली में स्थापित चिश्ती सिलसिले से संबंध रखते थे, दिल्ली से दक्कन क्षेत्र के दौलताबाद में 1328 में तब स्थानांतरित हुए थे, जब वे बच्चे थे। सात साल के बाद, 1335 ईस्वी में वे दिल्ली वापिस आ गए और 63 वर्ष तक यहां रहे। चौदहवीं सदी के अंत में, 1398 में, जब तुर्की आक्रमणकारी तैमूर ने मध्य एशिया से दिल्ली पर आक्रमण किया तो गेसू दराज़ ने स्वयं को दोबारा दक्कन में स्थानांतरित कर लिया।

3. प्रादेशिक राज्य एक–दूसरे से कटे हुए बिलकुल अलग–थलग क्षेत्र नहीं थे। राज्यों में परस्पर धार्मिक क्रिया–कलापों के अतिरिक्त व्यापार और वाणिज्य तथा कारीगरों के एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में स्थानांतरण के जरिये भी परस्पर लेन–देन का जाल बिछा हुआ था। उदाहरण के लिए, पन्द्रहवीं शताब्दी में रेशम के बुनकर, पट्टनुलकरों ने गुजरात क्षेत्र से विजय नगर राज्य में स्थानांतरण किया। विजय नगर और बहमनी साम्राज्यों में अफ्रीकियों और ईरानियों का स्थानांतरण भी देखने में आया।

4. एक अन्य विशेषता बिहार, बंगाल, असम, मध्य भारत, राजस्थान व अन्य स्थानों पर प्रादेशिक कला शैलियों का स्थानीय और प्रादेशिक स्तर पर विकास होना है। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप प्रादेशिक विशिष्ट पहचान बनीं और इनमें बदलाव आते गए, जो प्राचीन काल में अस्तित्व में नहीं थे। विविध प्रादेशिक राजवंशों ने कला, संस्क ति, साहित्य और वास्तुशिल्प को संरक्षण प्रदान किया। इस प्रकार अनेक प्रादेशिक राज्यों के अस्तित्व से किसी प्रकार की अव्यवस्था और भ्रम पैदा नहीं हुआ। इन राज्यों की आपस में लड़ाइयाँ भी हुईं, परन्तु उन्होंने अपने–अपने प्रदेशों को स्थिरता भी प्रदान की। जैसा कि ऊपर बताया गया है, उनकी अपनी एक निजी जीवन्त संस्क ति थी। प्रादेशिक राज्यों ने वास्तुशिल्प और राजनीतिक संस्क ति में एक दूसरे को बहुत प्रभावित किया। उदाहरण के लिए विजय नगर के प्राचीन शासक खुद को 'हिन्दू सुरतराणा' कहते थे, जिसका अर्थ है हिन्दू सुल्तान, यहां 'सुल्तान' शब्द दिल्ली सल्तनत से लिया गया है। इसी प्रकार दिल्ली सल्तनत की 'इकतादारी प्रणाली' का प्रभाव विजय नगर और बहमनी साम्राज्यों की प्रशासनिक पद्धति पर पड़ा।

प्रादेशिक राज्यों और दिल्ली सल्तनत और मुगल साम्राज्य जैसे साम्राज्य में क्या अंतर है? ऊपर उल्लिखित की गई किसी विशेष क्षेत्र की विशिष्ट भाषा और संस्क ति के अतिरिक्त, इन राज्यों की राजनीतिक और सैनिक क्षमताओं को भी प्रादेशिक सीमाओं द्वारा सीमित किया गया था।

पाठगत प्रश्न 11.1

1. भारत में प्रादेशिकता की चार विशेषताओं की सूची बनाएं।

___

2. मध्य काल के दौरान भारत में विकसित प्रादेशिक कला शैलियों के नाम लिखें।

___

3. मध्य काल के दौरान भारत के विभिन्न क्षेत्रों में कौन–से भक्ति धर्मों का उदय हुआ ।

____

11.2 प्रादेशिक राज्यों का उद्भव : सामान्य इतिहास

पिछले अध्यायों में आपने सातवीं से तेरहवीं सदी तक की अवधि के प्रादेशिक राज्यों के संबंध में पढ़ा। इन राज्यों का क्या हुआ? क्या ये राज्य मध्यकालीन भारतीय राजनीतिक परिद श्य से पूरी तरह समाप्त हो गए? इनमें से बहुत बड़ी संख्या में ये प्रादेशिक राज्य तेरहवीं सदी के बाद भी अस्तित्व में बने रहे, परन्तु इन राज्यों पर शासन करने वाले राजवंशों और भूगोल में परिवर्तन आते रहे। इस खंड में आप तेरहवीं से अठारहवीं सदी की अवधि के दौरान प्रादेशिक राज्यों के संबंध में सामान्य जानकारी प्राप्त करेंगे।

दिल्ली सल्तनत का कई राज्यों जैसे–बंगाल, बिहार, गुजरात, मालवा, राजस्थान के अनेक राजपूत राज्य जैसे रणथम्भौर, जालौर, नागौर, अजमेर, दक्कन प्रदेश के वारंगल व तेलंगाना राज्य, देवगीर के यादव और दक्षिणी राज्यों में द्वारसमुद्र के हॉयसल, मदुरई के पाण्ड्य और इसी प्रकार के अनेक राज्यों के साथ जुड़ने के कारण विस्तार हुआ। अलाउद्दीन खिलजी की अनेक लड़ाइयों और मोहम्मद–बिन–तुगलक के काल में राजधानी को दिल्ली से दौलताबाद, दक्कन में स्थानांतरित होने के संबंध में हम पहले ही पढ़ चुके हैं। जिन प्रदेशों को सल्तनत के साथ जोड़ा गया था। वे विभिन्न प्रांत बने और उन्हें प्रांतीय सूबेदार के प्रशासन के अधीन रखा गया। तेरहवीं सदी में दिल्ली सल्तनत की स्थापना से लेकर पन्द्रहवीं सदी में इसके पतन की अवधि तक, प्रांतों, जो कि पहले स्वतंत्र राज्य थे, केन्द्र दिल्ली के साथ परस्पर अन्तःक्रिया होती रही। परन्तु इन क्षेत्रों से सिर उठाने वाले विद्रोहियों को कभी पकड़ा नहीं जा सका। हम सभी जानते हैं कि राजकुमार के रूप में मोहम्मद बिन तुगलक ने अपना संपूर्ण जीवन काल दक्कन, उड़ीसा और बंगाल के बागियों को दबाने में बिताया। यद्यपि अब यह क्षेत्र दिल्ली सल्तनत का भाग था, परन्तु भाषा, कला, साहित्य और धर्म जैसी प्रादेशिक विशेषताएं अभी भी इसमें मौजूद थीं। असल में जब इस्लाम यहां पहुंचा तो इसने यहां कि प्रादेशिक विशेषताओं को ग्रहण किया। इन प्रदेशों में पहले से ही मुस्लिम व्यापारियों और सेना में नियुक्त मुस्लिमों की संख्या मौजूद थीं। फिर भी सल्तनत के प्रांतीय सूबेदारों ने स्थानीय 'राजाओं' और 'ज़मींदारों' के साथ मित्रता की और उनकी स्वतंत्रता को स्वीकार किया। चौदहवीं सदी के पश्चात् जब दिल्ली सल्तनत का पतन हो रहा था, तो अधिकांशतः प्रादेशिक राज्य सूबेदारों की बगावत का परिणाम थे। विजय नगर और बहमनी की स्थापना क्रमशः हरिहर व बुक्का और अलाउद्दीन हसन बहमन शाह जैसे प्रांतीय अधिकारियों द्वारा अपना अधिकार जमाने के परिणामस्वरूप हुई थी। इसी अवधि के दौरान पूर्व में बंगाल और पश्चिम में मुल्तान और सिंध स्वतंत्र हो गए। फिरोज शाह तुगलक ने अपने खोये हुए प्रदेशों को फिर से हासिल करने की कोशिश की मगर कामयाब नहीं हुआ। उसने बंगाल को जीतने का भी एक असफल प्रयास किया। उसने जाजनगर (उड़ीसा) पर भी आक्रमण किया और वहाँ लूटपाट की मगर, उसे भी अपने राज्य में नहीं मिला सका। उसने कांगड़ा को लूटा और गुजरात और थाट्टा में विद्रोह को दबाया।

1338 में फिरोजशाह तुगलक की म त्यु के साथ ही सल्तनत का पतन शुरू हो गया था। जैसा कि हमने अभी उल्लेख किया है, बहुत बड़ी संख्या में स्थानीय सूबेदार शक्तिशाली बन गए थे और प्रदेशों में उन्होंने स्वतंत्र अधिकार की घोषणा कर दी। सुल्तान और कुलीनों के परस्पर संबंध बिगड़ने लगे। स्थानीय शासकों और जमींदारों के आपसी झगड़ों के साथ–साथ प्रादेशिक और भौगोलिक तनावों ने सल्तनत को और कमजोर बना दिया। पतन की ओर बढ़ती सल्तनत को एक बड़ा झटका 1398 ई. में तैमूर के आक्रमण से लगा। तैमूर एक तुर्की था और मध्य एशिया से भारत में यहाँ की सम्पदा लूटने के लिए आया था। तैमूर ने दिल्ली में प्रवेश किया और उसने बड़ी बेरहमी से हिन्दुओं, मुसलमानों, औरतों और बच्चों का कत्ल किया।

दिल्ली पर तैमूर के हमले के पन्द्रह वर्ष बाद दिल्ली सल्तनत का पतन हो गया। गुजरात, मालवा और वाराणसी के पास जौनपुर की सल्तनतें शक्तिशाली प्रादेशिक साम्राज्यों के रूप मे उभरीं। गुजरात और जौनपुर लगातार दिल्ली सल्तनत के लोधियों के साथ (1451 से 1526 ई. तक) तनाव में उलझे रहे। दिल्ली सल्तनत से स्वतंत्र, नए प्रादेशिक राज्य मध्य और दक्षिण भारत में भी उभर कर आए, जिनमें से प्रमुख थे उड़ीसा का गजपति, बहमनी और विजय नगर साम्राज्य। बहलोल लोधी (1451–1485) और सिकंदर लोधी (1489–1526) जैसे लोधी सुल्तानों ने इन प्रादेशिक राज्यों को अपने नियंत्रण में करने का प्रयास किया। अन्त में, इब्राहिम लोधी के शासन के दौरान (1517–1526) बिहार ने अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी। पंजाब के सूबेदार दौलत खान ने बगावत कर दी और 1526 में बाबर को भारत पर आक्रमण करने के लिए आमंत्रित किया।

1526 ई. में मुगल साम्राज्य की स्थापना और बाद की अवधि में इसके विस्तार के बाद प्रादेशिक राज्यों में राज करने वाले राजवंशों की शक्ति धीरे–धीरे क्षीण होने लगी और कालान्तर में ये राज्य मुगल साम्राज्य का हिस्सा बन गए। परन्तु भाषा, कला, साहित्य और धर्म इत्यादि जैसी विशेषताएं कुछ परिवर्तनों के साथ मौजूद रहीं। अठारहवीं सदी में मुगलों के पतन के बाद प्रांतीय सूबेदारों ने बगावत भी की और कुछ राज्य जो मुगल साम्राज्य के साथ जोड़े गए थे, उन्होंने अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी। इसके परिणामस्वरूप नए प्रादेशिक साम्राज्यों का उदय हुआ, जैसे पंजाब, बंगाल, अवध, हैदराबाद, मैसूर और मराठा।

पाठगत प्रश्न 11.2

1. सल्तनत का पतन कब शुरू हुआ?

   ____

2. इब्राहिम लोधी के शासन–काल में किन दो प्रदेशों ने अपनी स्वतंत्रता की घोषणा की?

   ____

प्रादेशिक राज्यों का इतिहास : कुछ विशेष अध्ययन

11.3 जौनपुर

वर्तमान में जौनपुर पूर्वी उत्तर प्रदेश में वाराणसी में, गोमती नदी के किनारे स्थित है। दिल्ली सल्तनत के पूर्वी भाग में यह एक सम द्ध प्रांत था। जौनपुर का सूबेदार मलिक

सरवर था, जो फिरोजशाह तुगलक के काल में महत्त्वपूर्ण कुलीन था। 1394 में, सुल्तान नसीरूद्दीन मोहम्मद शाह तुगलक ने उसे मंत्री बना कर उसे सुल्तानु–शर्क की उपाधि दी, जिसका अर्थ है पूर्व का स्वामी। इसके बाद उसे मलिक सरवर सुल्तानुस शर्क के नाम से जाना गया। तैमूर के आक्रमण और दिल्ली सल्तनत के शक्तिहीन होने पर मालिक सरवर ने कमज़ोर राजनीतिक परिस्थितियों का लाभ उठाकर खुद को स्वतंत्र शासक घोषित कर दिया। मलिक सरवर का उत्तराधिकारी बना उसका पुत्र मुबारक शाह शरकी। सुल्तान ने अपने नाम के सिक्के भी चलाए। उसके शासन काल में दिल्ली सल्तनत का शासक महमूद शाह तुगलक था, जिसने जौनपुर को जीतना चाहा, परंतु असफल रहा। इसके बाद जौनपुर के शासकों और दिल्ली सल्तनत के बीच लगातार तनावपूर्ण स्थिति रही। शरकी सुल्तानों ने दिल्ली को जीतने की कई बार कोशिशें की, परन्तु वे कभी सफल नहीं हो सके। 1402 में, मुबारक शाह का भाई, इब्राहिम शाह शरकी सुल्तान बना और उसने चौंतीस वर्ष तक जौनपुर पर शासन किया। इब्राहिम विद्वान था और इस्लाम धर्म, दर्शन और कानून, संगीत और ललित कलाओं का भी अच्छा ज्ञाता था। वह वास्तुशिल्प का महान संरक्षक था। उसने 'शरकी शैली' के नाम से जानी जाने वाली वास्तुशिल्प की विशिष्ट शैली का विकास किया, जिस पर हिन्दुओं का भी कुछ प्रभाव था। अपने शीर्ष पर शरकी सल्तनत का विस्तार पश्चिमी उत्तर प्रदेश में अलीगढ़ से, पूर्व में उत्तरी बिहार के दरभंगा तक और उत्तर में नेपाल से दक्षिण में बुंदेलखंड तक फैला हुआ था। हुसैन शाह शरकी के शासन काल के दौरान (1458–1505) बहलोल लोधी के साथ एक बहुत लंबी लड़ाई शुरू हुई। बहलोल लोधी ने 1484 में जौनपुर पर आक्रमण किया और हुसैन शाह को भागना पड़ा। अन्त में, बहलोल लोधी के उत्तराधिकारी सिकंदर लोधी ने जौनपुर को अपने राज्य के साथ जोड़ा। हुसैन शाह की म त्यु होने पर शरकी राजवंश का अन्त हो गया।

11.4 कश्मीर

कश्मीर भारत के उत्तरी भाग में स्थित है। ग्यारहवीं सदी में कश्मीर के शासक शैव धर्म के अनुमायी थे, इसलिए शैव धर्म कश्मीर का प्रमुख धर्म बन गया था। यह चारों तरफ से घिरा बंद साम्राज्य था। एक अरब यात्री अलबरूनी जिसने इस अवधि में भारत में यात्रा की, ने अपनी पुस्तक, अल–हिन्द में उल्लेख किया है कि यहाँ तक कि किसी बाहरी हिन्दू को भी कश्मीर में प्रवेश की इजाज़त नहीं थी। 1320 में, कश्मीर के शासक राजवंश मंगोलों के आक्रमण के विनाशक प्रभाव पर नियंत्रण नहीं रख पाए। इसीलिए उन्होंने पूरा जनसमर्थन खो दिया। 1339 में शम्सुद्दीन शाह ने शैव शासकों को राजसिंहासन से हटाया और खुद कश्मीर का शासक बन बैठा। इस अवधि के बाद से कश्मीरी समाज पर इस्लाम का प्रभाव पड़ने लगा। सूफी संतों का एक समूह, जिन्हें ऋषि कहते थे, ने एक ऐसे धर्म का प्रचार शुरू किया, जिसमें हिन्दू धर्म और इस्लाम दोनों की विशेषताएं थीं। सूफी संत और शरणार्थी, मध्य एशिया से आकर कश्मीर में स्थानांतरित हो गए और उन्होंने भी आगे जाकर समाज और धर्म को प्रभावित किया। धीरे–धीरे जनता के गरीब वर्ग ने इस्लाम धर्म को अपनाना शुरू कर दिया। राज्य की ओर से इस्लाम को प्रोत्साहन तब मिला जब कश्मीरी सुल्तान, सिकंदर शाह (1389-1413) ने एक हुकुमनामा जारी किया कि सभी हिन्दू, खास तौर पर ब्राह्मण, जो इस प्रदेश में निवास कर रहे हैं वे या तो इस्लाम धर्म को अपना लें अथवा साम्राज्य को छोड़कर चले जाएं। ऐसा कहा जाता

है कि यह हुकुमनामा राजा के मंत्री, सूहा भट्ट के कहने पर जारी किया गया था, जो एक हिन्दू था और जिसने हाल ही में इस्लाम धर्म कबूल किया था।

शायद जैनुल आबिदीन (1420-1470) कश्मीर का सबसे बड़ा शासक था। वह बहुत बुद्धिमान शासक था और उसने उन सभी हिन्दुओं को वापस बुला लिया, जो सिकंदर शाह के उत्पीड़न की वजह से राज्य को छोड़कर चले गए थे। उसने जज़िया और गौवध बंद करवा दिया और हिन्दुओं को राज्य के महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किया। बड़ी संख्या में मंदिरों की मरम्मत कराई गई और नए मंदिर भी बनवाए गए। मुगल बादशाह अकबर के दरबारी इतिहासकार, अबुल फज़ल ने लिखा है कि कश्मीर में एक सौ पचास बड़े मंदिर हैं। सुलतान ज़ैनुल आबिदीन ने जम्मू के हिन्दू राजा की पुत्री से विवाह किया था। कुछ विद्वान जैनुल आबिदीन को कश्मीर का अकबर भी कहते थे। उसके शासन काल में कश्मीर बहुत सम द्ध हुआ और उसे बुड शाह या कश्मीरियों का महान राजा कहा गया।

सुल्तान ने बांध और नहरें बनाकर कश्मीर के क षि संबंधी विकास में बहुत योगदान किया। क षि संबंधी पैदावार का अभिलेख रखा जाता था। सूखा और अन्य प्राक तिक आपदाओं के दौरान, किसानों को ऋण और अनाज और चारे के रूप में सहायता दी जाती थी।

सुल्तान ने मुद्रा में भी सुधार शुरू किए। उसने बाज़ार पर नियंत्रण और उपभोक्ता वस्तुओं के निश्चित मूल्यों की भी शुरूआत की। जिन उपभोक्ता वस्तुओं की राज्य में कमी थी, सुल्तान ने उन चीजों के आयात पर भी मूल्यों में सहायता प्रदान की। नमक की कमी को पूरा करने के लिए, उसने लद्दाख से नमक मंगवाया और व्यापारियों की हरसंभव तरीके से मदद की। सुल्तान ने हस्तशिल्पों के विकास पर भी बहुत ध्यान दिया। उसने कागज़ बनाने और पुस्तकों की जिल्द बांधने के काम का प्रशिक्षण लेने के लिए कुछ लोगों को समर–कंद भेजा। सुल्तान ने पत्थरों को तराशने और उन्हें पॉलिश करने और कई अन्य दस्तकारियों को भी प्रोत्साहित किया। उसने कालीन और शॉल बनाने की कला की शुरूआत कराई, जिसके लिए कश्मीर आज भी प्रसिद्ध है। सुल्तान ने ज़ैनगीर, ज़ैनखेत और ज़ैनपुर शहरों की नींव रखी और उस झील पर एक टापू बसाया जिसे आज भी देखा जा सकता है। उसकी सबसे प्रमुख यांत्रिक सफलता वूलर झील पर 'जायना लंका', नाम से एक क त्रिम टापू बनाना था जिस पर उसने अपना महल और एक मस्जिद बनाई।

वह फारसी, संस्क त, तिब्बती और अरबी भाषाओं का बहुत बड़ा विद्वान था और उसने संस्क त और फारसी विद्वानों को संरक्षण प्रदान किया। उसके संरक्षण में महाभारत और कल्हण की राजतरंगिणी का फारसी में अनुवाद हुआ और बहुत सी फारसी और अरबी रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद हुआ। वह खुद भी एक कवि था और उसने 'कुतुब' के नाम से अनेक कविताएं लिखीं।

उसके बाद कश्मीर के सिंहासन पर शक्तिहीन शासकों का राज हुआ, जिससे भ्रम पैदा हुआ। इस स्थिति का फायदा उठाकर बाबर के रिश्तेदार ने कश्मीर पर कब्जा कर लिया। 1586 में अकबर ने कश्मीर पर जीत हासिल की और इसे मुगल साम्राज्य का हिस्सा बनाया।

11.5 बंगाल

बंगाल आठवीं सदी में पालों के और बारहवीं सदी में सेनों के अधीन एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रादेशिक साम्राज्य था। बंगाल दिल्ली सल्तनत का सुदूर पूर्वी प्रांत था। अत्यधिक दूरी, असहनीय वातावरण और परिवहन और संचार के कम साधनों की वजह से दिल्ली सल्तनत का इस प्रदेश पर नियंत्रण रख पाना बहुत कठिन था। इसलिए, बंगाल के लिए अपना स्वतंत्र अधिकार जताना बहुत आसान था। गयासुद्दीन तुगलक ने बंगाल को लखनौटी, सतगांव और सोनारगांव के तीन स्वतंत्र प्रशासकीय क्षेत्रों में बांटकर इस समस्या का समाधान करना चाहा। परन्तु इन समस्याओं का समाधान नहीं हो सका और अंत में बंगाल चौदहवीं सदी में, एक स्वतंत्र प्रादेशिक राज्य बनकर उभरा।

1342 में एक कुलीन हाजी इलियास खान ने बंगाल को संगठित किया और शम्सुद्दीन इलियास शाह की उपाधि हासिल करके वहाँ का शासक बन गया और उसने इलियास शाह राजवंश की नींव रखी। उसने बंगाल को अपने साथ जोड़ने की कोशिश की और उड़ीसा और तिरहुट पर धावा बोला और उन्हें नजराना देने के लिए मजबूर किया। इस प्रकार के विस्तारों ने दिल्ली सल्तनत के शासकों को सतर्क कर दिया, जिन्होंने बंगाल को जीतने के लिए अनेक बार कोशिशें कीं, परन्तु सफल नहीं हो सके। इलियास शाह राजवंश के महत्त्वपूर्ण शासकों में से एक था, गयासुद्दीन आज़म। वह विद्वान व्यक्ति था और उसने फारसी साहित्य को प्रोत्साहित किया। वह लोगों को स्वतंत्र और सही न्याय देने के लिए प्रसिद्ध था। कहा जाता है कि एक बार उसने दुर्घटनावश एक विधवा के पुत्र की हत्या कर दी। विधवा ने काज़ी के पास इसकी शिकायत दर्ज करा दी, जिसने शासक को न्यायालय में बुलाया। जब इस मामले का निर्णय हुआ, आज़म ने काज़ी से कहा कि अगर उसने अपने कर्त्तव्य का ईमानदारी से पालन नहीं किया होता, तो उसने उसे मार दिया होता। आज़म के चीन के साथ बहुत मधुर संबंध थे। बंगाल और चीन के बीच बहुत सम द्ध व्यापारिक संबंध थे। चटगांव का बंदरगाह वस्तु–विनिमय का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण केंद्र था। चीन के बादशाह की मांग पर आज़म ने बंगाल से बौद्ध भिक्षु भी वहां भेजे थे। पांडुआ और गौड़, बंगाल की राजधानियां थीं।

1538 में शेरशाह सूरी ने बंगाल को अपने राज्य में मिला लिया। 1586 में अकबर ने बंगाल को जीत लिया और इसे एक 'सूबा' बना दिया। फारसी प्रशासन की भाषा थी, परन्तु बँगला प्रादेशिक भाषा के रूप में विकसित हुई। बंगाल पर मुगलों का नियंत्रण स्थापित होने के साथ–साथ बंगाल के दक्षिण–पूर्वी इलाके के वन–क्षेत्र में भारी संख्या में मछुआरों और किसानों के स्थानीय समुदायों की भारी संख्या में आबादी बढ़ी। मुगलों ने ढाका में, पूर्वी डेल्टा के बीचोंबीच अपनी राजधानी स्थापित की। सरकारी कर्मचारियों और अधिकारियों को अनुदान में भूमि दी गई और वे यहीं बस गए। अलाउद्दीन हुसैन शाह (1439 से 1519 तक), बंगाल का एक अन्य महत्त्वपूर्ण शासक था। वह बहुत ही कुशल शासक था और उसने हिन्दुओं को ऊंचे प्रशासकीय पदों पर नियुक्त किया और कहा जाता है कि उसने वैष्णव सम्प्रदाय के चैतन्य को बहुत सम्मान दिया। सिकंदर लोधी के साथ उसकी लड़ाई हो गई और इसके बाद उसे उसके साथ शांति समझौता करना पड़ा।

11.6 गुजरात

यह एक बहुत ही उपजाऊ और सम द्ध प्रांत था। यहां पर बहुत ही विकसित बंदरगाह थे और यह अपने हस्तशिल्पों के लिए भी बहुत प्रसिद्ध था। अलाउद्दीन खिलजी पहला ऐसा सुल्तान था, जिसने इसे दिल्ली सल्तनत के साथ जोड़ा और तब से यह सल्तनत के तुर्की सूबेदारों के अधीन रहा। 1407 में तैमूर के आक्रमण के बाद ज़फ़र ख़ान जो कि उस समय वहां का सूबेदार था, स्वतंत्र शासक बन गया और कुछ समय के बाद उसने मुजफ़्फ़र शाह की उपाधि स्वीकार कर ली। ज़फ़र खान के पिता राजपूत थे, जिसने अपनी बहन का विवाह फिरोज़ शाह तुगलक से कराया था।

अहमद शाह (1411-1441) गुजरात के प्रमुख शासकों में से एक था। इसने अहमदाबाद शहर की नींव रखी और 1413 में इसे राजधानी बनाया। इसने जामा मस्जिद और तीन दरवाज़ा जैसे खूबसूरत भवन बनवाए और उद्यानों, महलों और बाज़ारों का सौंदर्यीकरण करवाया। अहमद शाह गुजरात के जैन वास्तुशिल्प से बहुत प्रभावित था। वह एक बहुत कुशल प्रशासक था और उसने गुजरात के प्रादेशिक राज्य को संगठित किया। उसने झालावाड़, बूंदी और दुर्गापुर के राजपूत प्रदेशों को पराजित किया। उसे एक कट्टर मुस्लिम माना जाता था, जिसने हिन्दुओं पर जज़िया लगाया और अनेक मंदिरों का विनाश किया। इसके साथ ही उसने हिन्दुओं को महत्त्वपूर्ण प्रशासनिक पदों पर नियुक्त किया। अहमद शाह ने हिन्दुओं और मुसलमान दोनों शासकों के साथ घमासान युद्ध किया। उसका सबसे बड़ा शत्रु था, मालवा का मुस्लिम शासक। गुजरात और मालवा के बीच घोर दुश्मनी थी, जिसने इन दोनों प्रादेशिक राज्यों को उत्तर भारतीय राजनीति के बड़े राजनीतिक फायदों पर ध्यान केंद्रित नहीं करने दिया। वह अपनी न्यायप्रियता के लिए प्रसिद्ध था। उसने खुलेआम अपने दामाद का कत्ल कर दिया, जिसने एक मासूम की हत्या की थी। मीरात–ए–अहमदी के इस रचनाकार ने सही कहा था कि उसके न्याय का असर उसके संपूर्ण शासन के दौरान मौजूद रहा।

शायद गुजरात का सबसे महत्त्वपूर्ण शासक महमूद (बेगढ़) था। उसे महमूद बेगढ़ शायद इसीलिए कहा जाता था कि उसने दो शक्तिशाली किलों या गढ़ सौराष्ट्र में गिरनार (जूनागढ़) और दक्षिण गुजरात में राजपूतों से चांपानेर किलों को जीता था। इन दोनों किलों की युद्ध नीति की द ष्टि से बहुत महत्ता थी। गिरनार का किला सौराष्ट्र के बहुत सम द्ध क्षेत्र में स्थित था और इसने सिंध के खिलाफ अभियानों के लिए आधार स्थल उपलब्ध कराया। सुल्तान ने पहाड़ी ढलान पर मुस्तफाबाद नामक नया शहर बसाया। बहुत से खूबसूरत भवनों वाला यह शहर गुजरात की दूसरी राजधानी बना। इसी प्रकार चंपानेर का किला भी मालवा और खानदेश के नियंत्रण में बहुत महत्त्वपूर्ण था। महमूद ने चंपानेर के पास मोहम्मदाबाद के नाम से एक नया शहर बसाया।

कुछ लोगों का विचार था कि उसे बेगढ़ इस लिए कहते थे, क्योंकि उसकी मूछें गाय (बेगरहा) के सींगों से मिलती थीं। कहते हैं कि महमूद खुली दाढ़ी रखता था, जिसकी लंबाई उसकी कमर तक थी। उसकी मूछें इतनी लंबी थी कि वह इन्हें अपने सिर के ऊपर बांधता था। एक विदेशी यात्री, डॅयूआरटो बारबोसा के मुताबिक, महमूद को बचपन से ही भोजन में ज़हर खिलाया जाता था जिसने उसे इतना ज़हरीला बना दिया था कि अगर कोई मक्खी भी उसके सिर पर बैठ जाती तो तुरंत मर जाती थी। महमूद अपनी बेइंतहा भूख के

लिए भी प्रसिद्ध था। कहा जाता है कि वह अपने नाश्ते में एक प्याला शहद, एक प्याला मक्खन और एक सौ से डेढ़ सौ तक केले खाता था। कुल मिलाकर वह एक दिन में दस से पन्द्रह किलो खाना खाता था।

महमूद बेगढ़ ने 52 वर्ष तक शासन किया। वह कला और साहित्य का भी बहुत बड़ा संरक्षक था। उसके दरबार में बहुत–सी फारसी और अरबी रचनाओं का अनुवाद किया गया। उसके दरबारी कवि थे 'उदयराज', जिन्होनें संस्क त में काव्य रचनाएं कीं।

1507 में महमूद ने उन पुर्तगालियों के खिलाफ अभियान की अगुवाई की, जो पश्चिमी समुद्र–तट पर बस गए थे और जिन्होंने वहां के व्यापार पर एकाधिकार हासिल कर लिया था और जिनकी वजह से मुस्लिम व्यापारियों को बहुत नुकसान पहुंच रहा था। पुर्तगालियों के व्यापारिक एकाधिकार को खत्म करने के लिए उसने तुर्की के सुल्तान की सहायता माँगी, परन्तु उसे बहुत ज़्यादा कामयाबी नहीं मिली और अंत में उसे पुर्तगालियों को कारखाना बनाने के लिए दीव में जगह देनी पड़ी। 1511 में उसकी म त्यु हो गई। उसके उत्तराधिकारियों के शासनकाल के दौरान अकबर ने 1572 ई. में गुजरात को जीत कर अपने साम्राज्य में मिला लिया।

पाठगत प्रश्न 11.3

1. शरक़ी सल्तनत का विस्तार किन क्षेत्रों में हुआ?

2. कश्मीर का अकबर किसे कहते थे?

3. इलियास शाह राजवंश की नींव किसने रखी?

4. अहमद शाह ने किस शहर की नींव रखी?

11.7 बहमनी सल्तनत

चौदहवीं सदी में दक्षिण भारत में दो बहुत शक्तिशाली साम्राज्यों का उद्भव हुआ। एक था बहमनी सल्तनत और दूसरा था विजयनगर साम्राज्य जिसने 300 वर्षों तक शासन किया। इस भाग में हम बहमनी सल्तनत के इतिहास और उसकी प्रशासनिक विशेषताओं पर चर्चा करेंगे।

दक्कन क्षेत्र दिल्ली सल्तनत के प्रांतीय प्रशासन का भाग था। दक्कन में स्थिर प्रशासन स्थापित करने के लिए, मोहम्मद बिन तुगलक ने अमीरन–ए–सदा/सदा अमीर, नियुक्त किए, जो एक सौ गांवों के मुखिया होते थे। 1337 के बाद से दक्कन के अधिकारियों और दक्कन की सल्तनत में संघर्ष बहुत बढ़ गए थे। इसके परिणामस्वरूप 1347 में दक्कन में, आंध्र प्रदेश की राजधानी गुलबर्गा के साथ एक स्वतंत्र राज्य स्थापित हुआ।

इसके संस्थापक हरन कांगु ने अलाउद्दीन हसन बहमन शाह की उपाधि ग्रहण की, क्योंकि वे अपने पूर्वज ईरान के पौराणिक नायक बहमन शाह को मानते थे और उसी के नाम पर अपने साम्राज्य का नाम उन्होंने बहमनी सल्तनत रखा। मोहम्मद बिन तुगलक के बाद दक्कन क्षेत्र को नियंत्रित करने के लिए दिल्ली सल्तनत द्वारा कोई भी कोशिश नहीं की गई, इसलिए बहमनी सुल्तानों ने बिना किसी की दखलअंदाजी के अपने साम्राज्य में नए क्षेत्र जोड़े। एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण अधिग्रहण था दभोल पर नियंत्रण पाना, जो पश्चिमी समुद्र तट पर एक महत्त्वपूर्ण बंदरगाह है।

बहमन शाह और उसके पुत्र मोहम्मद शाह के अधीन प्रशासनिक पद्धति बहुत ही व्यवस्थित थी। साम्राज्य को चार प्रशासकीय इकाई में बांटा गया था, जिन्हें 'तरफ' या 'प्रांत कहते थे। ये प्रांत थे – दौलताबाद, बीदर, बरार और गुलबर्गा। मोहम्मद प्रथम ने विजयनगर साम्राज्य को हराया और उसके परिणामस्वरूप गोलकुंडा को बहमनी साम्राज्य में शामिल किया गया। हर प्रान्त एक 'तरफदार' के अधीन था, जिसे 'सूबेदार' कहते थे। तरफ़दारों के अधिकार में से ज़मीन के कुछ हिस्से को 'ख़ालिस जमीन' के रूप में तब्दील किया गया था। ख़ालिस ज़मीन, ज़मीन का वह टुकड़ा होता था, जिसका इस्तेमाल राजा या उसके शाही घर–बार के खर्चों को पूरा करने के लिए किया जाता था। इसके अतिरिक्त हर कुलीन के काम और वेतन निश्चित थे। जिन कुलीनों के पास 500 घोड़े होते थे, उन्हें 1,000,000 हूण वार्षिक दिए जाते थे। यदि निर्धारित टुकड़ियों से कम टुकड़ियां होती थीं, तो तरफ़दारों को केंद्रीय सरकार को इस धन की पूर्ति करनी पड़ती थी। कुलीनों को अपना वेतन 'नगद' या भूमि या 'जागीर' के रूप में मिलता था। बहमनी शासक सैनिक सहायता के लिए अपने 'अमीरों' पर निर्भर थे। 'अमीरों' की श्रेणियों में दो समूह होते थे। एक समूह था दक्कनी लोगों का जो अप्रवासी मुस्लिम थे और बहुत लम्बे समय से दक्कन प्रदेश में निवास कर रहे थे। दूसरा समूह 'अफक़ियों' या 'परदेसियों' का था, जो हाल ही में मध्य एशिया, ईरान और ईराक से आए थे और कुछ समय पहले ही दक्कन क्षेत्र में बसे थे। इन दोनों समूहों में हमेशा बेहतर प्रशासनिक स्थिति हासिल करने के लिए आपस में तनाव बना रहता था। इनके आपसी कलह का असर बहमनी सल्तनत की स्थिरता पर भी पड़ा। भारत में पहली बार इन दोनों साम्राज्यों ने युद्ध में बारूद का इस्तेमाल किया। बहमनी पहले से भी आग्नेय–अस्त्रों से वाकिफ़ थे। उन्होंनें सिपाहियों को आधुनिक अस्त्रों और युद्ध कौशल के प्रशिक्षण के लिए तुर्की और पुर्तगाली विशेषज्ञों को नियुक्त किया।

बहमनी साम्राज्य में एक महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व था महमूद गवां। महमूद गवां के प्रारंभिक जीवन के बारे में कुछ भी जानकारी उपलब्ध नहीं है। वह जन्म से ईरानी था और दक्कन में पहले एक व्यापारी के रूप में आया। बहमनी शासक हुमायूं शाह ने उसे 'सौदागरों के मुखिया' या 'मालिक–उत–तुज्जर' की उपाधि प्रदान की। हुमायूं की अचानक म त्यु की वज़ह से उसके छोटे पुत्र अहमद त तीय का राज्याभिषेक हुआ। प्रशासन के कार्यों के लिए एक दरबारी परिषद् गठित की गई और महमूद गवां उस परिषद का महत्त्वपूर्ण सदस्य था। उसे वजीर या प्रधानमंत्री बनाया गया और 'ख्वाजु–ए–जहान' की उपाधि दी गई। इस अवधि के बाद का बहमनी साम्राज्य का इतिहास असल में महमूद गवां की उपलब्धियों का दस्तावेज़ है। खुद एक अफाकी होने के बावजूद, वह बहुत उदार था और अफ़ाकियों और दक्कनियों में समझौता करवाना

चाहता था। उसने बहुत ही कुशलता से साम्राज्य को नियंत्रित किया और इसे स्थिरता प्रदान की। गवां ने कांची तक विजयनगर के सभी प्रदेशों को जीत लिया। पश्चिमी समुद्री तट पर गोआ और दभोल को भी जीत लिया। इन प्रमुख बंदरगाहों को खोना विजयनगर के लिए भारी नुकसानदेह साबित हुआ। गोआ और दभोल पर नियंत्रण पाने के बाद बहमनी ने ईरान और ईराक के साथ अपने व्यापारिक संबंध मजबूत बनाए।

गवां ने अनेक आंतरिक सुधार किए और कुलीनों में परस्पर हो रही लड़ाइयों को खत्म करने का प्रयास किया। गवां ने आदेश जारी किया कि प्रांतीय तरफ़दार के सीधे नियंत्रण के अधीन प्रत्येक प्रांत में केवल एक ही किला तरफ़दार के अधीन रहेगा ताकि उनकी सैनिक शक्ति को कम किया जा सके। प्रांत के बाकी किलों को किलों के 'किलादार' या कमांडर के अधीन रखा गया। 'किलादार' की नियुक्ति केन्द्रीय सरकार द्वारा की गई थी। परन्तु उसकी म त्यु के तुरंत बाद, सूबेदारों ने अपनी–अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी और बहमनी साम्राज्य बिखर गया। पन्द्रहवीं और सोलहवीं सदी में कुछ 'अमीरों' ने बीदर, अहमदनगर, गोलकुंडा और बीजापुर व बरार में अपनी निजी स्वतंत्र सल्तनत स्थापित कर ली और इस प्रकार नए प्रदेशों का उदय हुआ। यह सल्तनत थी अहमदनगर की निज़ाम शाही, बीजापुर की आदिल शाही, गोलकुंडा की कुतुबशाही, बरार की इमदशाही, और बीदर की बरीद शाही। इन सबने मिलकर प्रदेशों का संगठन बना लिया और वैवाहिक संबंधों के द्वारा इसे और मज़बूत बनाया। इन्होंने विजयनगर के साथ अपनी पुरानी दुश्मनी कायम रखी। गोलकुंडा और बीजापुर ने आपस में वैवाहिक संबंध बनाए और उन्होंने विजयनगर के खिलाफ़ तालीकोट की लड़ाई की अगुआई की। अन्त में इन्होंने मुगल सेनाओं के समक्ष हार मान ली।

पाठगत प्रश्न 11.4

1. सदा अमीर को किसने और किस क्षेत्र के लिए नियुक्त किया?

2. महमूद गवां कौन था?

11.8 विजयनगर साम्राज्य

विजयनगर साम्राज्य की स्थापना 1336 हरिहर और बुक्का द्वारा की गई। ये दोनों भाई थे और इन्होंने मुहम्मद–बिन–तुगलक की सेना में नौकरी की थी। उन्होंने दिल्ली सल्तनत से संबंध तोड़कर कर्नाटक में एक स्वतंत्र राज्य की स्थापना की और 1336 में तुंगभद्रा नदी के किनारे राजधानी के रूप में विजयनगर नामक शहर की स्थापना की। इनके राजवंश को संगम राजवंश कहते थे। इस राजवंश के उद्‌भव के संबंध में अनेक विचारधाराएँ प्रचलित हैं। कुछ विद्वानों के मत में ये वारंगल के काकतिया के जागीरदार सामन्त थे और इनके पतन के बाद इन्होंने काम्पिलि प्रदेश में सेवा की। कुछ अन्य विद्वानों के मत में ये लोग होयसल के सामन्त थे और कर्नाटक से संबद्ध थे। हरिहर और बुक्का

आपकी टिप्पणियाँ

द्वारा उनका साम्राज्य स्थापित करने के लिए, उन्हें उनके समकालीन विद्वान संत विद्यारण्य से सहायता और प्रेरणा मिली। विश्वास किया जाता है कि अपने गुरू की स्म ति बनाए रखने के लिए दोनों भाईयों ने तुंगभद्रा नदी के किनारे विद्यानगर या विजयनगर की स्थापना की। इनके साम्राज्य में विभिन्न सांस्क तिक क्षेत्रों के लोग थे जैसे तमिल, तेलुगू और कर्नाटक क्षेत्र, जो विभिन्न भाषाएँ बोलते थे और भिन्न–भिन्न संस्क तियों से संबंध रखते थे।

1336 से 1565 तक विजयनगर पर तीन भिन्न राजवंशों ने राज किया संगम, जो 1485 तक सत्ता में रहे; शल्व, जो कि 1503 तक सत्ता में रहे और तुलुवा राजवंश। अंतिम राजवंश अराविदु था, जिसने सत्रहवीं सदी तक शासन किया। विदेशी यात्रियों निकोलों कोंटी, फरनाओं न्यूनिज़, दोमिंगो पेस, डुआर्टो बरबोसा और अब्दुर रज्ज़ाक ने विजयनगर की भव्यता के बारे में लिखा है।

विजयनगर राज्यों के शासकों में से सबसे महत्त्वपूर्ण शासक क ष्णदेवराय थे, जो कि तुलुव राजवंश के संस्थापक थे। वे एक महान सेनापति और बहुत की कुशल प्रशासक थे। उन्होंने बहमनी साम्राज्य के विनाश पर खड़े किए गए स्वतंत्र साम्राज्यों के साथ सिलसिलेवार लंबी लड़ाइयां लड़ीं, कानून और व्यवस्था को व्यवस्थित किया और दक्कन में पुर्तगालियों के प्रभाव से भी निपटे। पहले उन्होंने बीजापुर की आदिलशाही फौजों को पूरी तरह तहस–नहस किया और गुलबर्गा पर आक्रमण करके वहां कैद में बंदी बना कर रखे गए तीन बहमनी राजकुमारों को आजाद कराया। उन्होंने गुलबर्गा के राज्य सिंहासन को दोबारा प्रतिस्थापित करने में उनकी मदद की और स्वयं 'यवनराज्य स्थापनाचार्य' की उपाधि अपनाई।

क ष्णदेवराय ने पत्थरों से कुछ मंदिर बनवाए और उन पर प्रभावशाली गोपुरम अथवा अनेक दक्षिण भारतीय मंदिरों के भव्य द्वार बनवाए। उन्होंने विजयनगर के पास अपनी मां के नाम पर नागलपुरम नाम का एक उपनगर बसाया। विजयनगर के संबंध में कुछ बहुत ही विस्त त विवरण उसी की शासनावधि के दौरान के मिलते हैं। तिरूपति का भव्य मंदिर उन्हीं की कालावधि में क्योंकि वहां की देवी उनकी आराध्य देवी थीं। क ष्णदेवराय के बाद उनके भाई अच्युत देवराय 1530 ई. में राजगद्दी पर बैठे, और वे भी बहुत महत्त्वपूर्ण शासक थे। उनके शासन काल में उनके विरोधी गुट सिर उठाने लगे थे। शक्ति हासिल करने के लिए संघर्ष मुख्यतया सलुवा वीर नरसिंह और अरविदु राम राय के बीच था, जिसमें अरविदु राम राय की जीत हुई। यद्यपि राम राय राजगद्दी पर नहीं बैठे, परन्तु फिर भी उन्होंने सदाशिव राम को सिंहासन पर बिठाया और वास्तव में शासन स्वयं किया। उसने पुराने आभिजात्यों को हटाकर उनके स्थान पर अपने विश्वासपात्र व्यक्तियों को रखा। राम राय ने दक्कन की शक्तियों को एक–दूसरे के खिलाफ लड़ाकर उनमें संतुलन पैदा करने की कोशिश की, परन्तु यह नीति बहुत लम्बे समय तक नहीं चल सकी। दक्कन राज्यों ने राज्यों का एक संघ बना लिया और तालीकोट के युद्ध में विजयनगर की सेनाओं को बहुत गहरा आघात पहुंचाया। राम राय इसमें मारा गया। दक्कनी सेनाओं ने विजय नगर में प्रवेश किया और इसे बिलकुल तबाह कर दिया। अब इसका लक्ष्य पूर्व की तरफ केंद्रित हुआ, जहां पर पेनुकोन्डा से और बाद में चन्द्रगिरि से (तिरूपति के पास) अरविदु राजवंश ने शासन किया।

विजयनगर साम्राज्य की सेना और सैन्य संगठन

लगातार युद्धों को जारी रखने के लिए एक विशाल सेना की जरूरत थी। तोपखाना का बहुत महत्त्व था और बहुत हृष्ट–पुष्ट घोड़े रखे गए थे। विजयनगर के शासकों ने अरब सागर के पार से अरब और अन्य खाड़ी देशों से उच्च गुणवत्ता वाले घोड़े आयात किए। मालाबार बंदरगाह इस व्यापार और अन्य विलास संबंधी वस्तुओं के व्यापार का केंद्र था। विजयनगर के शासकों ने हमेशा मालाबार बंदरगाह पर अपना नियंत्रण रखने का प्रयास किया।

बहमनियों की तरह, विजयनगर राज्य भी आग्नेय–अस्त्रों के प्रयोग से परिचित था और युद्ध कौशल में आधुनिक अस्त्रों का प्रशिक्षण सिपाहियों को दिलाने के लिए उन्होंने तुर्की और पुर्तगाली विशेषज्ञों को नियुक्त किया था। रायों में से एक, देव राय द्वितीय ने अपनी सशस्त्र सेनाओं में मुसलमानों को भर्ती किया और उन्हें जागीरें प्रदान कीं और उनके उपयोग के लिए शहर में एक मस्जिद का निर्माण कराया। युद्ध कौशल की इन नई तकनीकों ने रणकौशल में एक क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया था। आग्नेय अस्त्रों का मुकाबला करने के लिए अब किलों की दीवारों की मोटाई बढ़ाई गई और सामने की किलेबंदी करके मज़बूत दीवारों के साथ विशिष्ट प्रकार के दरवाजों का निर्माण कराया गया। किलों की दीवारों के अंदर, तोपों को रखने के लिए विशेष प्रकार के बड़े–बड़े झरोखे बनाए गए। किलों पर विशेष प्रकार की प्राचीरों का निर्माण कराया गया जिन पर तोपें रखी जा सकें। कुछ आग्नेय–अस्त्र छोटे थे और उनमें राइफल और पिस्तौलें शामिल थीं। कुछ तोपों की तरह भारी–भरकम थे और उन्हें बैलगाड़ियों या हाथियों पर रखा जाता था और युद्ध के मैदान में ढकेला जाता था।

विजयनगर प्रशासन की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता वहां की अमरनायक प्रणाली थी। इस प्रणाली में, विजयनगर की सेना के सेनापति को नायक कहा जाता था। प्रत्येक नायक को एक–एक अलग प्रशासनिक क्षेत्र आबंटित किया जाता था। नायक की अपने अधिकार के प्रशासकीय क्षेत्र में खेती की गतिविधियों के विस्तार करने की ज़िम्मेदारी थी। वह अपने क्षेत्र से कर उगाही करता था और अपनी इस आय से सेना, घोड़े, हाथियों और युद्धों के लिए हथियारों का रख–रखाव करता था जिनकी आपूर्ति उसे अपने राय या विजय नगर के शासक को करनी पड़ती थी। नायक किलों का भी सेनापति होता था। लगान की कुछ राशि, मंदिरों के रखरखाव और सिंचाई के कामों के लिए भी खर्च की जाती थी। अमर–नायक वार्षिक रूप से राजा को नज़राना भेजता था और अपनी वफ़ादारी को प्रमाणित करने के लिए उपहार लेकर राजदरबार में खुद उपस्थित होता था। सत्रहवीं सदी में, इन नायकों में से अनेक नायकों ने अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी और प थक राज्यों की स्थापना की। सामंती नायकर अपने निजी सिपाही, सैनिक बल और हाथी रखते थे। यह एक बहुत ही शक्तिशाली वर्ग था, जिसने विजयनगर के प्राधिकार को चुनौती दी, इसकी आंतरिक संरचनाओं को कमज़ोर किया और तालीकोट की लड़ाई में विजयनगर की पराजय में अपना योगदान दिया।

विजय नगर और बहमनियों में संघर्ष

विजयनगर और बहमनी साम्राज्यों में रायचुर दोआब, जो कि क ष्णा और तुंगभद्रा नदियों के बीच की भूमि थी, पर नियंत्रण पाने के लिए परस्पर लगातार युद्ध होते रहते थे। यह

क्षेत्र बहुत ही उपजाऊ और खनिज संसाधनों से भरपूर था। गोलकुंडा की प्रसिद्ध हीरे की खदानें इसी दोआब क्षेत्र के पूर्वी भाग में स्थित थीं। दोनों साम्राज्यों की भौगोलिक स्थिति इस प्रकार की थी कि इनका विस्तार दक्कन में तुंगभद्रा के पार के क्षेत्र में ही संभव था। ऐसा लगता है कि लड़ाई का कोई परिणाम नहीं निकला और यथास्थिति को ही बनाए रखा गया। कभी बहमनियों का हाथ ऊपर हो जाता, तो कभी विजयनगर वालों की सरपरस्ती। उदाहरण के लिए, 1504 में बहमनियों ने रायचूर दोआब पर जीत हासिल कर ली परन्तु क ष्णदेवराय के सिंहासन पर बैठने के बाद बहमनी रायचूर, मुदकल, नालगोण्डा और कुछ अन्य अंदरूनी शहरों को हार गये। इन युद्धों का सबसे महत्त्वपूर्ण परिणाम यह निकला कि दोनों शक्तियां आपस में युद्ध करने में इतनी डूबी हुई थीं कि उन्होंने भारत के दक्षिणी समुद्री तट पर पुर्तगालियों की बढ़ती ताकत को महसूस ही नहीं किया। इसके अतिरिक्त, लगातार युद्धों ने दोनों राज्यों के संसाधनों का पूरी तरह दोहन कर दिया और वे दोनों बहुत कमज़ोर हो गये।

युद्ध के अन्य क्षेत्र थे, मराठवाड़ा क्षेत्र और क ष्णा–गोदावरी का डेल्टा क्षेत्र। दोनों क्षेत्रों की ज़मीन बहुत उपजाऊ थी और इनमें बहुत महत्त्वपूर्ण बंदरगाह थे जहां से विदेशों से व्यापार को नियंत्रित किया जाता था। उदाहरण के लिए, मराठवाड़ा क्षेत्र के उपजाऊ क्षेत्र की कोंकण पट्टी जिसमें गोवा बंदरगाह स्थित था, जो व्यापार और निर्यात, खास तौर पर ईरान और इराक से घोड़े आयात करने के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण क्षेत्र था।

आम तौर पर विजयनगर और बहमनी प्रदेशों में होने वाले युद्धों को हिन्दू–मुस्लिम संघर्ष माना जाता था। ऊपर उल्लिखित कारणों से पता चलता है कि ये लड़ाइयां किसी धार्मिक भेदभाव की वजह से नहीं थी। युद्धों का मुख्य कारण प्रादेशिक जगहों को जीतना और आर्थिक उद्देश्य था। दोनों राज्यों में आपसी दुश्मनी के बावजूद, ऐसे वक्त भी आए जब दोनों ने एक–दूसरे की सहायता भी की। उदाहरण के लिए, क ष्णदेवराय ने सल्तनत में सत्ता के कुछ दावेदारों का समर्थन किया और यवन साम्राज्य के संस्थापक की उपाधि देते हुए गर्व अनुभव किया। इसी प्रकार क ष्णदेवराय की म त्यु के पश्चात् बीजापुर के सुल्तान ने विजयनगर के उत्तराधिकार की लड़ाइयों को सुलझाने में समझौता कराया। परस्पर विचारों के आदान–प्रदान, खास तौर से कला, साहित्य और वास्तुशिल्प के क्षेत्रों में भी दोनों ने भागीदारी दी।

पाठगत प्रश्न 11.5

1. किन्हीं चार विदेशी यात्रियों के नाम लिखें, जिन्होंने विजयनगर साम्राज्य की भव्यता के संबंध में लिखा है?

2. किस राजा के शासनकाल में तिरूपति मंदिर का निर्माण हुआ?

3. अमीर नायक प्रणाली का अस्तित्व कहां पर था?

4. विजयनगर और बहमनी साम्राज्यों का किन क्षेत्रों में संघर्ष था?

11.8 अठारहवीं सदी में प्रादेशिक राज्य

आपने पहले अवश्य पढ़ा है कि अठारहवीं सदी में मुगल साम्राज्य पर क्या संकट था और अंत में किस प्रकार मुगल साम्राज्य का पतन हुआ। जैसे ही मुगल साम्राज्य के अधिकारों के कमी आई, प्रांतों के सूबेदार और बड़े जमींदार शक्तिशाली बने और उन्होंने अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी।

इस कालावधि के प्रादेशिक राज्यों को तीन वर्गों में बांटा जा सकता हैः

1. कुछ ऐसे राज्य थे जिनके संस्थापक महत्त्वपूर्ण मुगल कुलीन वर्ग के लोग थे और उन्होंने ऊंचे मनसब हासिल किए। यद्यपि वे सभी स्वतंत्र हो गए थे, परन्तु उन्होंने मुगल प्रदेशों के साथ अपने औपचारिक संबंध कभी भी नहीं तोड़े। इस वर्ग के कुछ प्रमुख राज्य हैं, अवध, बंगाल और हैदराबाद। अवध राज्य का संस्थापक था, सआदत ख़ान। बंगाल का संस्थापक था, मुशीद कुली ख़ान, और हैदराबाद का संस्थापक था, निज़ाम–उल–मुल्क आसफ जाह। तीनों ही मुगल अभिजात्य वर्ग के शक्तिशाली सदस्य थे और इन प्रांतों के सूबेदार थे। जैसे ही मुगल साम्राज्य शक्तिहीन हुआ, दिल्ली से बहुत बड़ी संख्या में सिपाहियों और सैनिकों ने इन नए राज्यों में अनेक भावी संभावनाओं को देखते हुए प्रवास किया।

   इन प्रदेशों के पुराने ज़मींदारों की स्थिति में बदलाव आ गया। उदाहरण के लिए सआदत ख़ान ने राजपूतों की अनेक ज़मींदारियां और रोहिलखंड के अफ़गानियों से उपजाऊ क षि भूमि छीन ली। इसी प्रकार बंगाल में मुगलों के प्रभाव को कम करने के लिए मुशीद कुली ख़ान ने सभी मुगल जागीरदारों को उड़ीसा में स्थानांतरित कर दिया और बंगाल में लगान के मुख्य स्रोतों का दोबारा से आकलन करने का हुक्म जारी कर दिया। सभी ज़मींदारों से बड़ी सख्ती से लगान इकट्ठा किया गया। इसके परिणामस्वरूप अनेक ज़मीदारों को साहूकारों और ऋणदाताओं से कर्ज़ लेना पड़ा। जो लगान का भुगतान करने में असमर्थ थे, उन्हें अपनी ज़मीने बड़े ज़मींदारों को बेचनी पड़ीं।

   इन राज्यों में एक और परिवर्तन आया कि साहूकारों और ऋणदाताओं या महाजनों की संख्या में व द्धि हुई। राज्य और किसान ऋण के लिए इन पर निर्भर थे। इसके बदले में ये धनी लोग बहुत शक्तिशाली बन गए और इन्होंने प्रशासन को भी प्रभावित किया। राज्य ने कर संग्रह करने का अधिकार उन लोगों के पक्ष में नीलाम कर दिया, जिन्होंने सबसे ऊंची बोली लगाई और वे लोग प्रायः साहूकार और महाजन थे। इसके बदले में साहूकारों ने राज्यों को एक निर्धारित राशि देने का वचन दिया। इस प्रकार राज्य को एक निश्चित आय होने का आश्वासन मिला। इस प्रणाली को 'इजरदारी व्यवस्था' कहा जाता था और जिन लोगों ने कर संग्रह करने का अधिकार खरीदा, उन्हें 'इजरदार' कहते थे। मुगल साम्राज्य ने इस व्यवस्था को हमेशा से ही निरूत्साहित किया। हमेशा ऐसी संभावना बनी रहती थी कि जो लोग कर वसूल करते थे, वे निर्धारित कर से कहीं ज्यादा कर संग्रह करते और किसानों को पीड़ित

करते और राज्य को कम कर देते, जिससे राज्य को आम लगान में भारी नुकसान उठाना पड़ता।

2. अठारहवीं सदी में प्रादेशिक राज्यों का दूसरा वर्ग उन राज्यों का था, जो मुगल शासन के दौरान वतन जागीरों के रूप में पहले ही स्वतंत्र राज्य होने की स्थिति में थे। राजपूत राज्य इस वर्ग में आते थे।
3. प्रादेशिक राज्यों का तीसरा वर्ग वह था, जो मुगल साम्राज्य के विरूद्ध बगावत करने के बाद अस्तित्व में आया। सिख, मराठा और जाट इस वर्ग से संबद्ध थे। उदाहरण के लिए, मुगलों के विरूद्ध सिखों के विद्रोह के परिणामस्वरूप पंजाब में राज्यों की स्थापना हुई।

पाठगत प्रश्न 11.6

1. अठारहवीं सदी में प्रादेशिक राज्यों को किन वर्गों में बांटा गया है?

आपने क्या सीखा

तेरहवीं से अठारहवीं सदी के दौरान प्रादेशिक राज्यों का उद्भव, दिल्ली सल्तनत की कमजोरी और मुगल साम्राज्य के पतन के बाद हुआ। इन प्रादेशिक शक्तियों की प्रक ति की समझ आपको दिल्ली सल्तनत और मुगल साम्राज्य को स्पष्ट प ष्ठभूमि में देखने के लिए सही द ष्टिकोण प्रदान करेगी। यदि इस कालावधि के प्रादेशिक राज्यों को छठी से बारहवीं सदी से चले आ रहे प्रादेशिक राज्यों के साथ जोड़कर भी देखा जाएगा तो अधिक उपयोगी होगा। प्रादेशिक राज्यों को समझने के लिए पहले प्रादेशिकता की संकल्पना को समझना होगा, जैसे समय के साथ धीरे–धीरे विकसित होने वाली राजनीतिक विशेषताएं, भाषा, धार्मिक सरोकार, कला और संस्क ति, जिनके संबंध में इस पाठ में विचार किया गया है। ऐसे अनेक प्रदेश हैं, परन्तु यहां हमने केवल कुछ ही प्रदेशों के संबंध में विशेष अध्ययन किया है, जैसे–जौनपुर, कश्मीर, गुजरात, बंगाल, विजयनगर और बहमनी राज्यों पर विचार–विमर्श किया गया। याद रहे कि यद्यपि ये राज्य आपस में लड़ते रहे, लेकिन इन्होंने कला, वास्तुशिल्प और धर्म संबंधी क्षेत्रों में विचारों का परस्पर आदान–प्रदान भी किया। केंद्रीय अधिकारों और इनके आपसी संबंधों में, समय–समय पर बदलाव आते रहे।

पाठांत प्रश्न

1. भारत में 13वीं से 18वीं सदी के बीच प्रादेशिक राज्यों के विकास का उल्लेख करें।
2. प्रादेशिक राज्य केंद्रीय साम्राज्य से किस प्रकार भिन्न थे?

3. बंगाल इतनी आसानी से अपना स्वतंत्र अधिकार जताने में कैसे सफल हुआ?
4. महमूद बेगढ़ में क्या विशिष्टता थी और उसे गुजरात का महत्त्वपूर्ण शासक क्यों माना जाता है?
5. प्रशासन की 'अमर–नायक' पद्धति का विवरण दीजिए।
6. पड़ोसी होने के बावजूद विजयनगर और बहमनियों में परस्पर शांति नहीं थी, ऐसा क्यों था, चर्चा कीजिए?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

11.1

1. भाषा, धार्मिक सरोकार, व्यापार और वाणिज्य के ज़रिये परस्पर अंतःक्रिया, प्रादेशिक कला शैलियां।
2. बिहार, बंगाल, असम, मध्य भारत और राजस्थान।
3. नामदेव, रैदास, तुकाराम, गुरूनानक

11.2

1. 1338 में फ़िरोज शाह तुगलक की म त्यु के पश्चात्
2. बिहार और पंजाब

11.3

1. पश्चिम में अलीगढ़, पूर्व में दरभंगा, उत्तर में नेपाल और दक्षिण में बुंदेलखंड
2. ज़ैमिल आबिदीन
3. हाजी इलियास ख़ान
4. अहमदाबाद

11.4

1. मोहम्मद बिन तुगलक, दक्कन
2. दक्कन में एक व्यापारी के रूप में पहुंचा और उसे 'मालिक–उत–तुज्जर' की उपाधि दी गई और बाद में वजीर बनाया गया।

11.5

1. निकोलो कोन्टी, फरनाओ न्यूनिज़, डोमिंगो पेस, डुआरटो बरबोसा और अब्दुर रज्ज़ाक।
2. क ष्णदेवराय

3. विजय नगर का प्रशासन
4. रायचूर दोआब; मराठवाड़ा क्षेत्र और क ष्णा–गोदावरी के डेल्टा क्षेत्र पर नियंत्रण

11.6

1. मुगल कुलीनों द्वारा स्थापित, वतन जागीरें, मुगल अधिकारियों से बगावत

पाठांत प्रश्नों के लिए संकेत

1. देखें अनुच्छेद 11.2
2. देखें अनुच्छेद 11.1 के अंतिम दो
3. देखें अनुच्छेद 11.5
4. देखें अनुच्छेद 11.6
5 . देखें अनुच्छेद 11.8
6. देखें अनुच्छेद 11.8

शब्दावली

सिलसिला	-	सूफियों के प थक संघ।
ज़मींदार	-	निजी भूमि के स्वामी, जिस पर उनका वंशगत अधिकार हो।
सुल्तानु-शरक	-	पूर्व के मालिक।
जजिया	-	भूमि–कर के अतिरिक्त एक प्रकार का कर, जो उन गैर–मुस्लिमों पर लगाया जाता था, जो सैनिक सेवा में नहीं थे।
खलीसा	-	वह भूमि, जिस पर सीधे राजा का नियंत्रण होता था और उसे जमींदार या किसी अधिकारी के नियंत्रण में नहीं दिया जाता था।
तरफदार	-	किसी प्रांत का प्रमुख।
जागीर	-	भूमि का टुकड़ा, जो राज्य द्वारा किसी सरकारी अधिकारी को प्रदान किया जाता था।
अमीर	-	सेनापति, दिल्ली सल्तनत में अधिकारी वर्ग की श्रेणी में तीसरा उच्चतम पद।